नवम्बर 2019

सामान्य ज्ञान दर्पण

वर्ष 33 चतुर्थ अंक

इस अंक में...

5 सम्पादकीय

विशेष स्तम्भ

8 समसामयिक सामान्य ज्ञान

14 आर्थिक परिदृश्य

19 राष्ट्रीय परिदृश्य

23 अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य

29 क्रीड़ा जगत्

32 भारतीय राजव्यवस्था : एक दृष्टि में

35 समसामयिक महत्वपूर्ण तथ्य

36 विज्ञान समाचार

38 युवा प्रतिभाएं

40 सारभूत तत्व कोष

लेख

43 आर्थिक लेख—अर्थव्यवस्था के विकास में सहायक : डिजिटल बैंकिंग

45 अन्तरिक्ष विज्ञान लेख—मानवयुक्त अंतरिक्ष उड़ान की ओर भारत के बढ़ते कदम

47 पारिस्थितिक लेख—जल प्रदूषण एवं उसके प्रकार

49 कृषि लेख—वर्टिकल फार्मिंग : भविष्य की खेती

51 65वीं बी.पी.एस.सी. प्रारम्भिक परीक्षा हेतु विशेष : तैयारी की रणनीति, समसामयिक घटनाएं, बिहार सामान्य ज्ञान

हल प्रश्न-पत्र

66 रेलवे रिक्रूटमेण्ट बोर्ड लेवल-1 ग्रुप 'डी' कम्प्यूटर आधारित परीक्षा, 2018

73 उ.प्र. पुलिस कम्प्यूटर ऑपरेटर (ग्रेड-ए) सीधी भर्ती परीक्षा, 2017

84 बिहार एस.एस.सी. इण्टरमीडिएट स्तर प्रारम्भिक परीक्षा, 2018

93 उत्तराखण्ड शिक्षक पात्रता परीक्षा, 2018: द्वितीय प्रश्न-पत्र

104 एस.एस.सी. कम्बाइंड हायर सेकण्डरी लेवल (10+2) (प्रथम चरण) परीक्षा, 2018

113 वस्तुनिष्ठ प्रश्न-कोर्स ऑन कम्प्यूटर कॉन्सेप्ट्स

117 वार्षिक रिपोर्ट—2018-19—पशुपालन डेयरिंग और मत्स्यिकी क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास के बढ़ते चरण : एक दृष्टि में

120 क्या आप परिचित हैं ?

121 रोजगार समाचार

सामान्य ज्ञान दर्पण में प्रकाशित किसी भी सामग्री अथवा चित्र के लिए सम्पादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है. **-सम्पादक**

• **E-mail :** publisher@pdgroup.in • **Website :** www.pdgroup.in

सम्पादकीय

एकत्व की मानसिकता का विकास कीजिए

पाप से घृणा करो पापी से नहीं.

विज्ञान की दृष्टि के अनुसार हम दो बहुत महत्वपूर्ण भ्रमों में रहते हैं–दिशागत भ्रम तथा कालगत भ्रम. इन दोनों भ्रमों के निवारण के लिए क्रमशः अनन्तता (Infinity) और नित्यता (Eternity) की परिकल्पना की गई है. दर्शन इसमें एक तीसरा भ्रम जोड़ देता है–पृथकत्व का भ्रम (Illusion of separation). इस भ्रम के वशीभूत होकर हम अपने को विश्व से सर्वथा एक पृथक् सत्ता मानते हैं और तद्नुसार आचरण करते हैं.

दर्शन की भाषा में हमने समस्त विश्व को दो भागों में विभक्त कर रखा है–(i) ''मैं'' तथा (ii) ''मैं नहीं'' यह भेद बुद्धि ही हमारे जीवन को भ्रममय बनाए रखती है. जगद्गुरु शंकराचार्य ने इस भेद बुद्धि अथवा द्वैतभाव पर विजय प्राप्त करने के लिए 'अद्वैत' दर्शन का प्रतिपादन किया था.

अपने को सर्वथा पृथक्-सबसे अलग समझने का दुष्परिणाम यह होता है कि हम केवल अपने बारे में सोचते हैं और इस प्रकार सोचते हैं कि हम अन्य सबकी अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ हैं और हमको श्रेष्ठतम बन जाना चाहिए. पृथकत्व का भाव अहंकार एवं स्वार्थ के भावों को उद्दीप्त करता है और हम अपने साथियों को पीछे धकेलकर, उनके हितों पर चोट करके भी, उनका अहित करके भी, आगे बढ़ जाने का प्रयत्न करते हैं. हम यहाँ सफलता, पुरस्कार आदि प्राप्त करके अपने अहं को संतुष्ट भी करते हैं तथा अहं को बल भी प्रदान करते हैं. आत्म प्रतिष्ठा एक प्रकार का लोभ है. इसके साथ हम इतने आत्मकेन्द्रित हो जाते हैं कि प्रत्येक अन्य व्यक्ति हमें अपना विरोधी प्रतीत होने लगता है.

पृथकत्व अथवा आत्मरत व्यक्ति को पग-पग पर निराश होना पड़ता है, क्योंकि वांच्छित वस्तु या सफलता से प्रायः हमें वंचित रहना पड़ता है. शिक्षक हमें शिक्षा देता है कि स्वार्थ-सिद्धि के लिए कार्य करने का अर्थ निराशा की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने के समान होता है.

मैं आत्मरत नहीं हूँ अथवा नहीं बनूँगा, यह कहना बहुत सरल है, परन्तु यह कहना सरल नहीं है कि मैं हृदय में झाँककर भी यह कह सकता हूँ कि मैं आत्मरत नहीं हूँ. श्रीराम के भक्त श्री हनुमान ने अपना हृदय चीरकर जब देखा था, तो उसमें परमार्थ रूप केवल श्रीराम-जानकी की झाँकी दिखाई दी थी, परन्तु हमारे लिए ऐसा करना सम्भव नहीं है. रूसी दार्शनिक मैडम ब्लावैटस्की के अनुसार, ''आत्मरति से रहित होने की इच्छा सबसे बड़ी आत्मरति है.''

आत्मरति से रहित होना एक बहुत श्रेष्ठ लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होना है. इस लक्ष्य की ओर ले जाने वाले मार्ग के कई सोपान हैं.

सर्वप्रथम हमको ज्ञानेन्द्रिय के विषयों को नकारने का प्रयत्न करना चाहिए. एम. कौलिन्स नामक विदुषी ने लिखा है कि इस मार्ग पर अग्रसर होने की क्षमता प्राप्त करने के पहले हमें तीन काम करने चाहिए; हमारी आँखों में आँसू आना बन्द हो जाए; हमारे कान संसार से सम्बन्धित बातें सुनना बन्द कर दें तथा हमारे हृदय में राग-द्वेष आदिक भावों के लिए स्थान न रहे. इस प्रकार अपने हृदय के रक्त में अपने पैरों को धोकर हम पवित्र करें और तब इस पथ की ओर उन्मुख हों. भक्त नागरीदास ने साधना के उक्त स्वरूप को इस प्रकार व्यक्त किया है–

शीश काट मुँह पर धरै तापर रक्खै पाँव ।
इश्क चमन के बीच में ऐसा होउ तौ आउ ॥

इन दोषों का निवारण अथवा अपने पैरों को प्रक्षालन मार्ग की ओर ले जाने वाले द्वार की देहरी पर ही कर लेना उचित है, क्योंकि जितने ऊपर जाने पर स्वार्थ का सर्प दंश करेगा, उतने ही ऊँचे से गिरना पड़ेगा और विनाश का स्वरूप भी उतना ही भयावह होगा. महाबली एवं परम विद्वान लंकेश रावण का उदाहरण सामने है, वह उच्च कुलोत्पन्न उच्चकोटि का विद्वान् था, परन्तु आत्मप्रतिष्ठा की दुर्बलता द्वारा ग्रसित था. परिणाम यह हुआ कि वह राक्षसों की कोटि में गिना गया और परम्परा उसको सर्वथा वध्य मानने लगी.

द्वार में प्रवेश करने पर हमारा प्रथम कर्तव्य है कि हम पृथकत्व की भावना को समाप्त कर दें–उसका हनन कर दे. हम यह सोचना बन्द कर दें कि हम किसी पापी अथवा मूर्ख व्यक्ति से अलग अथवा दूर खड़े हो सकते हैं. वह न्यूनाधिक रूप में हमारी ही तरह है. पूर्व में हम भी उसी तरह के थे और भविष्य में वह भी हमारी तरह हो जाएगा. उससे दूर-दूर रह कर यदि हम आत्मोन्नति अथवा आत्मविकास की बात सोचते हैं, तो हम मनोविज्ञान की मान्यता के अनुसार उसको अपनाने की सुप्तवासना के वशीभूत होकर कार्य करते हैं. अन्ततः हमको यह स्वीकार करना ही होगा कि वह व्यक्ति हमसे अभिन्न है और हम अपने को उससे अलग नहीं रख सकते हैं. इसका अर्थ यह है कि ज्ञान प्राप्ति के पूर्व हमको अपने चारों ओर दिखाई देने वाले व्यक्तियों की भाँति समस्त अच्छे और बुरे, अनुभवों के मध्य होकर गुजरना ही पड़ेगा. हम उनसे जितना परहेज करेंगे. वे उतने ही अधिक हमारे अंग बन जाएंगे. इस मनोवैज्ञानिक सत्य को एक मनीषी ने इस प्रकार स्पष्ट किया है–''याद रखो जिस गंदे कपड़े को तुम छूना नहीं चाहते हो, वह सम्भवतः कल तुम्हारा था, अथवा कल तुम्हारा हो सकता है. तुम्हारे कंधों की ओर जब यह फेंका जाता है. उस समय यदि तुम उसकी ओर से अपना मुँह फेर लेते हो, तो याद रखो कि वह तुम्हारी ओर अधिक निकट आकर तुम्हारे कंधे से एकदम चिपक जाएगा.

आध्यात्मिक दृष्टि से विचार करने पर यह तथ्य उजागर होता है कि किसी व्यक्ति से अलगाव अनुभव करके हम कर्म उत्पन्न करते हैं और वह हमको उस वस्तु के साथ बाँध देता है और तब तक बाँधे रहता है जब तक हम उस व्यक्ति के साथ एकत्व का अनुभव नहीं करने लग जाते हैं. धर्मशास्त्र बार-बार कहते हैं कि परमात्मा का प्रकाश प्रत्येक आत्मा को समान रूप में प्राप्त होता है. वह प्रकाश आत्मा और परमात्मा को एकीकृत कर देता है तथा आत्मा-आत्मा के मध्य भेद को, भेद-बुद्धि जन्य पृथकत्व के भ्रम को समाप्त कर देता है.

हम बुरे व्यक्ति से दूर रहें, परन्तु यह सोचकर कि ऐसा करना सही रास्ते पर चलना है, न कि यह विचार करके कि ऐसा करके हम स्वच्छ एवं पवित्र बने रहेंगे. सम्भवतः विक्टर ह्यूगो विरचित Les Miserables के विशप ने उक्त तथ्य को ही इस प्रकार व्यक्त किया है–"Hate the sin and not the sinner" अर्थात् पाप से घृणा करो, पापी से नहीं.

हमको उस फूल की भाँति होना चाहिए जो अपनी विकसित दशा के प्रति जागरूक न रहकर भी समस्त वायुमण्डल को मकरन्द लुटाता रहता है. हमें स्मरण रखना चाहिए कि हमको देश और काल के भ्रम से मुक्त होने के लिए अनन्त और अनित्य की ओर उन्मुख होना पड़ेगा. पृथकत्व के भ्रम तथा तज्जन्य अभिशाप से मुक्त होने के लिए हमें एकत्व की ओर उन्मुख होना पड़ेगा. कवि अज्ञेय ने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह संकल्प प्रस्तावित किया है–यह दीप अकेला इसको पंक्ति दे दो. अपनी सामाजिक अस्मिता को प्रमाणित करने के लिए हमें एकत्व की मानसिकता का विकास करना ही चाहिए. ●●●